ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-10*November- 2021
Innovation The Research Concept

# अंबेडकरवादी साहित्य: तथ्य, तर्क और समीक्षा
# Ambedkarite Literature: Facts, Arguments and Review

Paper Submission: 15/11/2021, Date of Acceptance: 22/00/2021, Date of Publication: 24/11/2021

**ललित कुमार**
सहायक आचार्य,
हिंदी विभाग,
वी.वी. राज.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जालोर,
उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश / **Abstract**

डॉ. अम्बेडकर के विचार और व्यक्तित्व दलित साहित्य के मूल में हैं। इन विचारों और व्यक्तित्व का प्रभाव तथा इससे जुड़े तर्क व तथ्यों की समीक्षा का आलोचनात्मक स्वरूप ही दलित साहित्य की आत्मा को आधार देता है।

The thoughts and personality of Dr. Ambedkar are at the core of Dalit literature. The influence of these ideas and personality and the critical nature of the analysis of the logic and facts associated with it, gives the basis of the soul of Dalit literature.

**मुख्य शब्दः** अंबेडकर, विचार, अंबेडकरवाद, विचारधारा, दलित, दलित साहित्य, साहित्यकार, आलोचना, शिक्षा समस्या, समानता, राजनेता, राजनीति, सम्मान, जाति।

**Keywords:** Ambedkar, Thought, Ambedkarism, Ideology, Dalit, Dalit Literature, Litterateur, Criticism, Education Problem, Equality, Politician, Politics, Respect, Caste.

**प्रस्तावना**

डॉ. भीमराव अंबेडकर केवल भारत के संविधान निर्माता ही नहीं अपितु भारत के समूचे दलित वर्ग के उद्धारक और प्रेरणा पुंज भी है। उनके विचारों और व्यक्तिगत को दलित साहित्य के संदर्भ में जानना-समझना नितांत जरूरी है।

हिंसात्मक तरीके से भय पैदा कर अपनी बात मनवाना, विचारधारा थोपना या संसाधनों पर जबरन कब्जा करना आतंकवाद है..... प्रायः रूढ़ रूप से आतंकवाद के राजनैतिक-आर्थिक और सामरिक रूप या दशाओं पर ही ध्यान दिया गया है लेकिन 'सामाजिक आतंकवाद' जैसी परिभाषा को जानने-समझने की कोशिशें जानबूझकर अनदेखी की जाती रही हैं।

ज्योतिबा फूले, राजाराम मोहनराय, डॉ. भीमराव अंबेडकर, महात्मा गाँधी और मान्यवर कांशीराम ने समाज में जातिगत आधार पर फैले शोषण और अत्याचार के वातावरण को जिस तरह परिभाषित किया है या उसकी आलोचना की है, उससे स्पष्ट तौर पर यह तथ्य पुख्ता होता है कि समाज में सामाजिक आतंकवाद का नासूर गहराई तक जमा हुआ है। प्रसिद्ध दलित चिंतक डॉ. श्यौराज सिंह 'बैचेन' कहते हैं - "वर्णभेद के विरूद्ध लड़ने और कुर्बानियाँ देने में पिछले चार हजार सालों के इतिहास में क्या दलित पूर्वजों ने वर्णभेद के खिलाफ लड़ने में कोई कमी की होगी ? परन्तु हमारी पराजयों के किस्से ही क्यों साहित्य में भरे पड़े हैं ? जाति के आधार पर वर्ण-साहित्यकारों ने उनके क्या हाल किए होंगे क्या कभी यह कल्पना की है हमने ?"[1]

दलितों को सामाजिक अराजकता, उत्पीड़न, अत्याचार और अपमान की दलदल से निकालने में डॉ. भीमराव अंबेडकर को शिखर पुरूष माना जाता है। डॉ. अंबेडकर ने आम दलित की तरह ही व्यक्ति जीवन में अपमान और अत्याचार झेला और उनके मन-मस्तिष्क में इस सामाजिक आतंकवाद के खिलाफ विरोध करने की ताकत होती गयी। डॉ. अंबेडकर ने दलित वर्ग की समस्याओं को गहराई से समझा, उनका विश्लेषण किया और निदान की ओर अग्रसर हुए। 'शिक्षित बनो', 'संगठित रहो', 'संघर्ष करो' जैसे नारे इसी निदान का प्रमाण हैं।

अंबेडकर ने अपनी और अपने समाज की भीषण व्यथा को समाप्त करने के लिए शिक्षा को सबसे अचूक और कारगर हथियार माना। शिक्षित होकर ही आर्थिक रूप से और राजनैतिक रूप से ताकत हासिल की जा सकती है, अपने अधिकारों की समझ और उन्हें हासिल करने की सोच विकसित की जा सकती है।

गुलाम भारत से लेकर आजाद भारत में सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक जड़ता हिंसक स्तर तक रही है और अंबेडकर ने इसी प्रकार की तमाम जड़ताओं के खात्मे पर जोर दिया था। वे वैचारिक तौर पर मजबूती की पक्षधर रहे हैं। वे जानते थे कि दलित वर्ग को तथाकथित सामाजिक-समानता समर्थकों का आडंबरी समर्थन तो मिलेगा लेकिन वे मानसिक तौर पर दलितों का समर्थन नहीं करेंगे।.....

दलित विचारक गोपाल गुरू अपने आलेख 'अवमानना के आयाम' में लिखते हैं कि - "जहाँ-जहाँ निम्नवर्गीय अवमाननाकारी हालात के खिलाफ संघर्षरत होता है, वहाँ-वहाँ उत्पीड़क व्यंग्य और कटाक्ष का इस्तेमाल करने का हथकंडा अपनाते हैं।"[2]

यह सामाजिक वैचारिकता का आंतकवाद है जो मानसिक तौर पर दिमाग में हिंसा और घृणा भरकर दलित वर्ग के विरूद्ध कार्य करता है और यह कार्य समर्थन और सहयोग के नाम पर किया जाता है जिसे आम या साधारण दलित समझ ही नहीं पाता है।

अंबेडकर की उच्च शिक्षा और साहित्यिक-बौद्धिक स्तर से उन्हें वर्ग संघर्ष के लिए जो चेतनात्मक ऊर्जा मिलती रही उससे दलित और पिछड़े वर्ग के साथ-साथ महिलाओं का भी उत्थान और कल्याण संभव हो पाया। दलितों के उत्थान के लिए आर्थिक मजबूती को डॉ. भीमराव अंबेडकर ने आवश्यक माना था क्योंकि बिना आर्थिक मजबूती के किसी भी तरह का संघर्ष और स्थिति सुगम एवं सरल नहीं हो सकती है। बकौल घनश्याम शाह - " प्रचलित संस्कृति और उसके परिवेश के साथ-साथ ठहरे हुए आर्थिक विकास से उप-परिस्थितियों ने भी दलितों के आंदोलन के लिए जमीन तैयार करने में अपनी भूमिका निभाई है।"[3]

डॉ. अंबेडकर ने भारतीय संविधान के जरिये लोकतंत्र का जो सैद्धान्तिक ढ़ाँचा प्रस्तुत किया था उसे जातिवाद और वर्णवाद के आतंकवाद ने नष्ट-भ्रष्ट कर डाला और संविधान के मूल उद्देश्य सही और सच्चे अर्थों में पूरे नहीं हो पाए।

भारत में आज भी जो सामाजिक हालात हैं वे भारत की लोकतांत्रिक गरिमा को तार-तार करने वाले हैं। दलित वर्ग के साथ गाँव-देहात और शहरों में जैसा व्यवहार होता है वैसा तो अमेरिका और यूरोप जैसे देशों में वर्णभेद की दशाओं में भी नहीं होता।सामाजिक भेदभाव हमारी तमाम दार्शनिक और सांस्कृतिक धारणाओं तथा 'उच्चताओं' की उलटबाँसी जैसा प्रतीत होता है। यदि किसी समाज मे इस स्तर का भेदभाव है तो उसे 'सभ्य' या 'बौद्धिक' कहा जाना घोर उपहास ही माना जा सकता है।

डॉ. एन सिंह डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा और साहित्य पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं - "दलित साहित्य को सबसे अधिक डॉ. अम्बेडकर के जीवन और साहित्य ने ही प्रभावित किया है। शताब्दियों से अशिक्षा, अज्ञान एवं दरिद्रता के अँधेरे में भटकते हुए इस वर्ग के लिए डॉ. अम्बेडकर एक सूर्य के रूप में प्राप्त हुए, जिसने उन्हें समता, शिक्षा, सम्मान का प्रकाश प्रदान किया।[4]

अंबेडकरवादी विचारधारा के प्रभाव से दलितों-विशेषकर दलित युवाओं में जो जाग्रति और उत्साह पैदा हुआ है वह विकास का लक्ष्य पूरा करने में सार्थक सिद्ध हो सकता है लेकिन दलित वर्ग के भीतर ही ऐसी ताकतें हैं जो समाज को, अंबेडकर के विचारों को खोखला करने पर तुली हैं। दलित समाज से ही फायदा लेकर कृतघ्नता करने वाले लोग स्वयं के चरित्र पर अंबेडकर का मुखौटा लगाकर तो चलते हैं लेकिन अंबेडकर की विचाररधारा से नहीं जुड़ पाते।

डॉ. रमेशचन्द मीणा अपने आलेख 'समता-न्याय का साहित्य' में लिखते हैं - "अंबेडकर के द्वारा लिखे गए लेख व पुस्तकों में सदियों पुरानी भारतीय व्यवस्था की अमानवीय, असामाजिक और अव्यवहारिकता को निर्ममता से उद्घाटित किया गया।"[5]

भारतवर्ष में संस्कृति, रूढियों और मान्यताओं तथा प्रथाओं की आड़ में दलितों को जिस तरह पीछे धकेला गया, उनका अपमान और उपेक्षा की गयी वह आज भी दर्द बनकर, टीस बनकर गहरी साँसों के साथ अभिव्यक्त होती रहती है।

वास्तव में अंबेडकर को प्रामाणिक रूप से पहला बौद्धिक दलित साहित्यकार कहा जा सकता है जिन्होंने दलित वर्ग की पीड़ा को समझने के साथ उसके समाधान और निराकरण के उपाय भी प्रस्तुत किये।

डॉ. अंबेडकर दलितों के भविष्य को लेकर सदैव चिंतित रहे और दलितों को सरकारी सेवाओं में हिस्सेदारी के हिमायती रहे, साथ ही उनका स्पष्ट मानना था कि आर्थिक क्षेत्र में भी दलित मजबूती हासिल करें। इस प्रकार के प्रयासों से दलित सामाजिक समानता और सम्मान के निकट आ पाएँगे।

दलितों को सरकारी सेवाओं में भी अधिकाधिक भागीदारी मिले इसके लिए भी अंबेडकर प्रयासरत रहे और इसी कारण आरक्षण का प्रावधान संविधान में किया गया ताकि इस वर्ग को सरकार और सरकारी संस्थाओं तथा प्रतिष्ठानों में बराबर आने का मौका मिल सके। अंबेडकर के इस कदम का तथाकथित 'मजबूत' और 'सभ्य' वर्गों द्वार पुरजोर विरोध किया गया और विरोध का क्रम आज भी जारी है।

अंबेडकर के विचार और प्रतीक दलित वर्ग के लिए आज के दौर में संजीवनी का काम करते हैं।

दलितों को हिन्दू धर्म के भीतर रहते हुए भी यातनापूर्ण जीवन जीना पड़ा है। अम्बेडकर ने अपने सम्पूर्ण जीवन में दलित वर्ग के लिए जो कार्य किये वे अमरता की शिला स्थापित करने जैसे हैं। डॉ. एन.सिंह. लिखते हैं - "अम्बेडकर स्थितियों में आमूल-चूल परिवर्तन की बात कहते थे जो कभी संभव नहीं हुआ और न जिसकी आगे संभावना है। यहीं से दलित नेतृत्व दो खेमों में बँट गया। डॉ. अम्बेडकर दलितों को भारत की स्वतन्त्रता के साथ हिन्दू धर्म की दासता से भी मुक्ति दिलाना चाहते थे।[6]

अम्बेडकर ने अपने वर्ग के लिए जितना जोर लगाया वो अपने आप में आश्चर्य पैदा करता है। अम्बेडकर ने अपने समकालीन राजनेताओं से भी निरन्तर संघर्ष किया क्योंकि आरक्षण जैसे मुद्दे पर उनके विचारों से अन्य राजनेता समहत नहीं थे और दलितों को पृथक रूप से अधिकार देने के पक्ष में नहीं थे।

अम्बेडकर ने शिक्षा पर सर्वाधिक जोर दिया और स्पष्ट रूप से माना कि 'शिक्षा शेरनी का दूध है, जो पियेगा वो दहाड़ेगा।"

प्रसिद्ध दलित चिंतक डॉ. धर्मवीर अम्बेडकर वैचारिकी के प्रमुख लोगों में से एक माने जाते हैं। वे लिखते हैं - "हिन्दुओं की खोजी गई अस्पृश्यता धार्मिक मूल की है। गिनाए गए और चिन्हित किये गये लोगों को छूने से धर्मभ्रष्ट होता है, यह मनुष्य जाति के इतिहास में एक अनहोनी है। बताया जाता है कि

अस्पृश्यता की यह अनहोनी प्रेमचंद के घर में बसती थी। खुद प्रेमचंद की जबान पर यह लिखित रूप में मौजूद थी।'[7]

अंबेडकर के दौर में भी स्वतंत्र विचारधारा रखने वाले जो लेखक थे उनमें से भी अधिकांश अपने जातीय-वैचारिक दायरे के मूल को नहीं छोड़ पाए और उनकी मौलिक प्रवृति की हेयता उनके तथाकथित खुले विचारों में से भी बदबू की तरह बाहर आती रही। ऐसे छद्म जातिवाद और भेदभाव का विरोध भी अंबेडकर ने तार्किक ढंग से किया है।

प्रफुल्ल कोलख्यान जैसे अंबेडकरवादी लिखते हैं - "स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व की आकांक्षा रखने वाली किसी भी सिद्धांतिकी को भारतीय परिप्रेक्ष्य की विशिष्टता के कारण 'पंूजीवाद और हिंदुत्व' से एक साथ लड़ना पड़ेगा। अलग-अलग नहीं। डॉ. अम्बेडकर के विचार महत्वपूर्ण हैं - 'मेरे विचार से इस देश के दो दुश्मनों से कामगारों को निपटना होगा। ये दो दुश्मन हैं, ब्राह्णवाद और पँूजीवाद.....। ब्राह्णवाद से मेरा आशय स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व की भावनाओं के निषेध से हैं।'[9]

अंबेडकरवाद केवल तक सीमित नहीं है। स्त्री, गरीब, मजदूर, किसान आदि के जीवन सुधार और अधिकारों का विमर्श भी अंबेडकरवाद ही है। यह व्ठब् जैसे वर्ग के लिए भी उसी सकारात्मक अर्थ में प्रासंगिक है। शरण कुमार लिंबाले जैसे मराठी दलित साहित्यकार कहते हैं - "फुले-अंबेडकर से प्रेरणा लेकर आज ओबीसी विमर्श का एक नया दौर शुरू हो चुका है। फुले-अंबेडकर के विचार उन्हें दिशा देने का काम कर रहे हैं। 9

अंबेडकरवादी विचारणारा समग्र, समुचित, शुचित और समर्पित विचारधारा है जिसका मूलाधार मानवीयता और समानता पर आधारित है। व्यक्ति के सम्मान, रक्षा, सुरक्षा और पोषण तथा विकास जैसे तत्व इस विचारधारा का ढ़ाँचा तैयार करते हैं जिस पर समानता की मीनार खड़ी कर उसे राष्ट्र के विकास के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। अंबेडकरवादी विचारधारा तमाम मार्गों, प्रक्रियाओं, चरणों, अवरोधों और आलोचनाओं के पश्चात भी अंततः विशुद्ध रूप से राष्ट्रवादी विचारधारा सिद्ध होती है क्योंकि इसमें समानता, विकास और मानवीय मूल्यों का प्रभाव पूर्णतया निहित है।

अंबेडकरवादी विचारधारा तब तक प्रासंगिक और प्रभावकारी रहेगी जब तक मानव जीवन में समानता और लोक कल्याण की आवश्यकता रहेगी।

स्पष्टतया अंबेडकर ने अपने विचारों से एक युगीन प्रभाव पैदा किया जो उन्हें मार्टिन लूथर जैसे संघर्ष करने वाले शीर्ष और अग्रणी नेताओं में स्थान दिलाता है। आज समूचे देश ही नहीं दुनिया भर में अंबेडकरवादी विचारधारा को जानना-समझना और प्रभावी तथा व्यावहारिक उपयोग में लाया जाना आवश्यक प्रतीत होता है जिससे मानव जाति का समेकित और समुचित कल्याण संभव हो सके।

**उद्देश्य**

डॉ. अम्बेडकर के विचार और दलित साहित्य के तथ्यों एवं तर्कों का विश्लेषण करने से सामाजिक समानता और दलितोद्धार का मार्ग प्रशस्त हो सकेगा

**निष्कर्ष**

डॉ. अम्बेडकर की वैचारिकता दलित साहित्य की उर्वरकता और मूल भूमि का कार्य करती रही है। सामाजिक समानता और दलितोत्थान के लिए दलित साहित्य का विमर्श प्रासंगिक है।

**संदर्भ**

1. *सामाजिक न्याय और दलित साहित्य - डॉ. श्यौराज सिंह बैचेन, (सम्पादक), संपादकीय।*
2. *आधुनिकता के आइने में दलित - अभय कुमार दुबे (संपादक), पृष्ठ 97*
3. *अस्मिताओं का सहअस्तित्व (घनश्याम शाह का आलेख), आधुनिकता के आइने में दलित-अभय कुमार दुबे (संपादक), पृष्ठ 197*
4. *दलित साहित्य के प्रतिमान - डॉ. एन.सिंह, पृष्ठ 85-86*
5. *सामाजिक न्याय और दलित साहित्य - संपादक - डॉ. श्यौराजसिंह बैचेन, पृष्ठ 78*
6. *दलित साहित्य के प्रतिमान - डॉ. एन.सिंह, पृष्ठ 251*
7. *(हिन्दुओं के दो महापुरूषों की अछोपा औरतें और वे खुद - डॉ. धर्मवीर भारती), सामाजिक न्याय और दलित साहित्य, संपादक - डॉ. श्यौराजसिंह बैचेन, पृष्ठ 167*
8. *दलित राजनीति की समस्याएँ - प्रफुल्ल कोलख्यान (दलित राजनीति की समस्याएँ - राजकिशोर (संपादक), पृष्ठ 39)*
9. *'ओबीसी विमर्श से मिला दलित आंदोलन को लाभ' (प्रसिद्ध मराठी दलित लेखक शरण कुमार लिंबाबे से प्रेमा नेगी की बातचीत), बहुजन साहित्य की प्रस्तावना - प्रमोदरंजन, आयवन कोस्का (संपादक), पृष्ठ 29)*